राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय

जतन प्रकाश

यह किताब ग़ैर सतसंगियों को
नहीं दिखलानी चाहिये

अम्बाला शहर

160

से

बाबू ब्रिजबासी लाल साहब बी. ए., एल एल. बी.,
वकील द्वारा प्रकाशित हुआ

१९१६

REGISTERED UNDER SECTIONS 18 & 19 OF ACT XXV OF 1867.

फ़िहरिस्त मज़ामीन

राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय

जतन प्रकाश

पोथी जुगत प्रकाश में बहुत सी जुक्तियां इस क़िस्म की दर्ज हैं कि जिन पर अमल करने से वह सब विघ्न जो अभ्यास के समय अक्सर परमार्थियों को सताते हैं दूर हो सक्ते हैं मगर यह देखने में आता है कि मन कभी सुस्त पड़कर और कभी जोश में भर कर परमार्थियों को अभ्यास में बैठने ही नहीं देता है और इधर उधर की ग़लत सलत समझौती देकर अभ्यास छुड़ा देता है इसलिये ज़रूरी हुआ कि मुफ़स्सिल ज़िक्र मन की इस तरह की घातों का किया जावे ताकि परमार्थी वाक़िफ़ होकर इनसे बच सकें और मध्य की चाल चलते हुऐ दुरुस्ती के साथ अभ्यास में बैठ सकें।

१—मन हमेशा नई बातों को चाहता है और नीज़ शौक़ीन इस बात का है कि इस को कोई ऐसी तर्कीब या जुक्ती हाथ लगे जो दूसरे शख़्सों को मालूम न हो इस-लिये सतसंगी लोग अक्सर औक़ात मन के इन अंगों में बर्त कर हज़ूर राधास्वामी दयाल की बतलाई हुई सुमिरन

ध्यान व भजन की जुक्तियों की जैसी कि चाहिये क़दर नहीं करते और नई जुक्ती व जतन की तलाश में रहते हैं और इस वजह से कुछ अर्सा डांवाडोल रहकर अभ्यास में सुस्त व ढीले पड़ जाते हैं।

ख़्याल करना चाहिये कि राधास्वामी मत में शरीक होने पर सिवाय ऊपर कही हुई जुक्तियों के और कोई जुक्ती नहीं बतलाई गई और जब कि मालूम है कि हज़ूर राधास्वामी दयाल ने अपना औतार केवल हम जीवों के उद्धार व संभाल ही के निमित्त धारन फ़र्माया और इसके सरंजाम देने के लिये सिर्फ़ सुमिरन ध्यान व भजन की जुक्तियों का उपदेश फ़र्माया तो क्या वजह है कि परमार्थी को दृढ़ बिश्वास इस अम्र का न हो कि अगर हम जीवों की संभाल व उद्धार के लिये किसी और जुक्ती की ज़रूरत होती तो वह समरथ दयाल उसको छिपाये न रखते। इसलिये हर एक परमार्थी पर फ़र्ज़ है कि इधर उधर की भरमना को छोड़कर तवज्जह एकसू करके अपने अभ्यास में लगा रहे और अपनी परमार्थी व स्वार्थी दोनों क़िस्म की संभाल व बेहतरी होते रहने का दृढ़ निश्चय चित्त में रक्खे।

परमार्थी को यह भी ख़्याल में लाना चाहिये कि शरीक होते वक़्त उसने कैसी गहिरी ग़रज़मन्दी इन जुक्तियों के सीखने के लिये जाहिर की थी और कैसा भारी शौक़ जुक्तियां सीखकर उनकी कमाई करने का ज़ाहिर किया

था - फिर जबकि चित्त में बदस्तूर आसरा हज़ूर राधा-स्वामी दयाल के चरनों का क़ायम है इधर उधर के ख़्यालात उठा कर अभ्यास में सुस्त व ढीला पड़ जाना कैसी नमुनासिब बात है। ऐसा करने से न सिर्फ़ अपने वादः के ख़िलाफ़ अमलदरामद होगा बल्कि हज़ूर की फ़र्माई हुई जुक्तियों का एक तरह पर निरादर बन पड़ेगा और इस तौर पर हज़ूरी चरनों में बेअदबी करते हुऐ किस मुंह से आशा दया व मेहर की की जावेगी।

२—बाज़ औक़ात परमार्थी अक्सर करके ग़ैर सत-संगियों की सोहबत में ज़्याद: बैठने उठने की वजह से इस क़िस्म के ख़्यालात चित्त में उठाने लगता है कि अजी जबकि हमने उपदेश ले लिया है उद्धार हमारा ज़रूर हो ही जावेगा फिर क्या ज़रूरत है कि तन व मन पर ज़ोर देकर अभ्यास किया जावे और हाल में जो सामान संसार के भोग विलास के दया से हमको मिले हैं उनका मज़ा न लिया जावे - या अगर इस क़िस्म के सामान मुयस्सर नहीं हैं तो दूसरों की हालत देखके लालच में आकर यह कहता है कि अव्वल क्यों न औरों की तरह संसार के सा-मान फ़राहम करने के लिये कोशिश की जावे-काफ़ी सा-मान इकट्ठा होने पर या बुढ़ापे में पेन्शन लेकर घर बार से अलग हो दो की बजाय चार छः घंटे अभ्यास कर लिया जावेगा और कोशिश तो इस बात की की जावेगी कि

बक़िया उम्र परमार्थ ही में सर्फ़ हो।

परमार्थी को याद रखना चाहिये कि यह बड़ी ज़बरदस्त घात मन की है और दरपर्दा अप्रतीत की दशा में रह कर मन के बिकारी अंगों में बरतना है। अजी उद्धार ही के लिये तो इस मत में शरीक हुए थे और मन मानी समझौती लेकर उसी से ग़ाफ़िल हो गये!

परमार्थी को यह भी समझना चाहिये कि जबकि उद्धार तन व मन और इनके सामान से न्यारे होकर निज धाम में बासा पाने को कहते हैं तो बजाय उस क़िस्म की कार्रवाई करने के जिसकी मदद या ज़रिया से छुटकारा ऐसे सामानों से हो उन ही सामानों की फ़राहमी में लग-जाना कहां की अक़्लमन्दी है। और यह जो इस ने इतमीनान कर लिया कि उद्धार मेरा अवश्य ही होगा यह तो दुरुस्त है मगर याद रखना चाहिये कि उद्धार कराने के लिये ज़रूर मालिक की तरफ़ से इसी ज़िन्दगी में कार्रवाई इसके यहां से अलहदा करने की जारी होगी फिर चन्द रोज़ा मज़े के लिये नामुनासिब सामान इकट्ठा करके अपने तईं सख़्त रगड़ और खैंचातानी में डालना जो कि अलहद-गी के समय अवश्य ज़हूर में आवेगी किस दर्जे की ना-दानी है! और नीज़ जबकि इस वक़्त औसत दर्जे की तन्दु-रुस्ती क़ायम है और दया से औसत दर्जे के गुज़ारे का इन्तिज़ाम भी मौजूद है और थोड़ी बहुत फ़ुर्सत भी रहती

है और मालूम है कि बुढ़ापे में जिस्म कमज़ोर व बीमार व निकम्मा हो जाता है और कोई भरोसा नहीं है कि बुढ़ापे की नौबत आने पावे या पहिले ही कूच हो जावे-फिर परमार्थ जैसे ज़रूरी और अनमोल काम को बुढ़ापेके लिये छोड़ देना कैसी बेवक़ूफ़ी है! और जबकि हज़ूर राधास्वामी दयाल को कुल्ल मालिक व सच्चा पिता मान लिया तो कहां गुंजाइश है कि परमार्थी उनसे बेमुख होकर अपने बल बूते पर कोशिश उन नाजायज़ व नामुनासिब सामानों के इकट्ठा करने की करे जिनसे उन्हों ने दया करके इसको बचा रक्खा है! अगर यह सब बातें समझते हुए भी कोई शख़्स इस क़िस्म के ख़्यालात से बाज़ न आवे तो ज़ाहिर है कि उसको कोई प्रतीत राधास्वामी मत व हज़ूर राधास्वामी दयाल के चरनों में नहीं है-सिर्फ़ ऊपर से बातें बनाई जाती हैं।

३—बाज़ परमार्थी अनसमझों की यह बातें कि राधास्वामी मत में भी तो यही कहा जाता है कि अन्त समय पर इस को दर्शन मिलेंगे और किसी ऊंचे सुख स्थान में बासा मिलेगा-जीते जी कोई सिद्धी शक्ती इस को प्राप्त नहीं होगी और न कोई मुक़ाम खुलेगा-क्या मालूम राधास्वामी दयाल कोई हैं या नहीं हैं-अन्त समय पर सहायता हो या न हो-वग़ैरः वग़ैरः सुन सुना कर अभ्यास से ग़ाफ़िल बल्कि अकसर परमार्थ से बेमुख हो जाते हैं।

इस क़िस्म की बातों से साफ़ ज़ाहिर होता है कि मत का उसूल क़तई नहीं समझा गया। उसूल का ज़िक्र छोड़ कर ज़ैल में थोड़ा सा मुक़ाबिला दुनियादार व सच्चे परमार्थी सतसंगी की रहनी गहनी का दिखाया जाता है। उस पर ग़ौर करने से मालूम होगा कि अगर एक मिनट के लिये यह भी मान लिया जावे कि राधास्वामी मत में सब की सब फ़र्ज़ी बातें हैं और राधास्वामी दयाल भी फ़र्ज़ी पुरुष हैं फिर भी बलिहाज़ लुत्फ़ ज़िन्दगी के सच्चे सतसंगी की ज़िन्दगी दुनियादार से हज़ार हज़ार दर्जा उम्दा है :—

(१)　दुनियादार दिन और रात रुपया पैसा कमाने और इज़्ज़त व सरवत हासिल करने और इन्तिज़ाम व बन्दोबस्त घर बार व रोज़गार वग़ैरः में ग़ल्तां पेचां रहता है।

परमार्थी औसत दर्जे के गुज़ारे के सामान और कारज मात्र घर बार व रोज़गार वग़ैरः के मुतअल्लिक़ व्योहार के सिवाय दुनिया का कुछ फ़िक्र नहीं रखता।

(२)　दुनियादार दुनिया का सामान फ़राहम करके मन में फूलता है और संसार में फैलता है और एतदाल से ज़्यादः भोग कर कर के तन व मन के दुख सहता है— अपने से छोटों पर नफ़रत की निगाह से देखता है और अपने से बड़ों की दौलत इज़्ज़त देख कर उम्र भर ईर्षा की

अग्नी में जलता रहता है और और ज़्याद: अमीर व बड़ा बनने के जोश व फ़िक्र में नेक व बद की तमीज़ छोड़ कर तरह तरह के कुकर्मों का बोझ सिर पर लाद कर रोता पीटता हुआ जहान से कूच करता है।

परमार्थी दुनिया के सामान मिलने पर डरकर एहतियात के साथ बरतता है और सामान के ज़हरीले असर से बचा रहता है और ज़िन्दगी भर गुल फूल की तरह खिला रहता है और थोड़े में ख़ुश रहकर सब से प्यार भाव से बरतता हुआ बेफ़िक्र यहां से रवाना होता है।

(३) दुनियादार अनेक तरह के जहान के धन्दों और मख़मसों में फंस कर दुखी सुखी होता है।

परमार्थी जहान के झगड़ों से अलग रहकर अपना ज़्याद: से ज़्याद: वक़्त मालिक की याद में सर्फ़ करता हुआ मस्त व मगन रहता है।

(४) दुनियादार रस व आनन्द के लिये मोहताजों की तरह मन इन्द्री के द्वारों पर झक मारता रहता है और कभी सेर न हो कर सदा हाय हाय मचाता है।

परमार्थी अभ्यास की जुक्ती के मुताबिक़ अपनी सुरत को बार बार मालिक के चरनों में जोड़ता है - चाहे हर बार अभ्यास में पूरी कामयाबी हासिल न भी हो मगर तवज्जह की धार सुरत की बैठक के मुक़ाम पर एकत्र करने में जो

रस मिलता है वही कौन कम है और भाग से जब कभी अंतर में रूप या शब्द से मेल होता है उस वक़्त जो कैफ़ियत होती है उसका ज़िक्र ही क्या है। इस क़िस्म के तजर्बात हासिल करता हुवा परमार्थी संसार की तरफ़ आंख भर कर देखना भी नहीं चाहता।

(५) दुनियादार संसार का इन्तिज़ाम व उपकार करने की कोशिश करता है और नाकामयाब रहता है और राज व हकूमत हासिल करने के लिये मरता है और नामुनासिब ख़्याल उठा कर दंड सहता है।

परमार्थी अपने तन व मन के इन्तिज़ाम और अपने उपकार की कोशिश करता है और कामयाब होता है और अपना उद्धार होता हुआ देख कर अंतर में मगन व सरशार रहता है और सात अक़्लीम की बादशाहत पर लात मारता है।

अलावा इन सब बातों के ख़्याल करना चाहिये कि हज़ूर राधास्वामी दयाल के प्रथम अवतार के बाद जितने आचार्य्य हमारे मत के हुए सब के सब जितने अर्से तक गुरुमुख दशा में रहे कम व बेश हम जीवों ही की तरह से बरते और सिवाय इसके कि हम लोगों को उनकी रहनी गहनी पसन्दीदा व प्यारी मालूम होती थी हमको कोई इल्म उनकी अन्दरूनी हालत का नहीं था। मगर देखने में आया कि वही चोला जो कि एक वक़्त निहायत ग़रज़

मन्दी के साथ अपने गुरू महाराज के चरनों में हाज़िर होता था और आम जीवों की तरह मोहताज गुरू महाराज की दया दृष्टि और उनके चरनों के प्रेम प्रीत का था दूसरे वक़्त पर प्रेम का भंडार दरसता है और हज़ारों परमार्थी मिस्ल पहिले के चरनों में हाज़िरी देकर परमार्थ की दौलत हासिल करते हैं यानी हम लोगों के देखते ही देखते वह उच्च दशा जिसका कि राधास्वामी मत में ज़िक्र है और वह कैफ़ियत जो हज़ूर राधास्वामी दयाल के निजरूप का दर्शन घट में हासिल करने या उनके चरन कंवल में वासा पाने की बयान की गई है एक ख़ास शख़्स को प्राप्त हो जाती है। साथ ही यह भी रौशन है कि हज़ारों सतसंगी बराबर अन्तर में पर्चे हज़ूरी दया व मेहर के अपनी हैसियत के मुआफ़िक़ हासिल करके अपने भागों को सराहते हैं और दुनिया से अपने तअल्लुक़ात दिन बदिन कम होते देखते हैं। और यह भी मालूम है कि हज़ारों मर्तबा ऐसा हुआ और अब भी रोज़मर्रः होता है कि सतसंगी अपने दुनियावी कारोबार में मालिक की दया का हाथ महसूस करते हैं यानी भारी से भारी दुनियावी मुश्किल बग़ैर ख़ास जतन व परियास के सहज में हल हो जाती है। और बारहा ऐसा हुआ कि गुरू महाराज के चरनों में अन्तर में या ज़बानी या बज़रिये ख़त के अर्ज़ करते ही मुश्किल से मुश्किल मुसीबत दूर या हल्की हो गई। और मरते वक़्त जो सतसंगियों की हालत देखी गई अक्सर करके वह बिल्कुल

अचरजी मालूम हुई यानी सतसंगी कुल्ल मालिक का नाम लेते हुए और उनकी दया व मेहर के गुनानुबाद गाते हुए हंसते खेलते चोला छोड़ गये। फिर क्या यह सब बातें काफ़ी तौर पर साबित नहीं करती हैं कि ज़रूर हज़ूर राधा-स्वामी दयाल जीते जागते समरथ पुरुष हैं और जो भेद निज धाम व उसके रास्ते का व जुक्ती अभ्यास क़ी उन्हों ने प्रगट फ़र्माई वह निहायत दुरुस्त और बिल्कुल सच्चे हैं और ज़रूर वह दयाल हमारी जायज़ स्वार्थी परमार्थी ज़रूरतों को मुनासिब मदद देकर पूरा फ़र्माते हैं और रफ़्तः रफ़्तः हमारे संसार के बंधन ढीले करते जाते हैं। अगर यह दुरुस्त है तो ज़रूर यह भी आशा हो सक्ती है कि अन्त समय पर औरों की तरह हमारी भी संभाल फ़र्मा कर सुख स्थान में बासा देंगे वग़ैरः वग़ैरः।

४—बाज़ परमार्थी यह समझते हैं कि हम तो अक्सर हाज़िरी सतसंग की देते हैं और हमारा प्रीतम हमारी आं-खों के सामने ही रहता है जब जी चाहा दर्शन कर सक्ते हैं और सतसंग में भी काफ़ी मौक़ा मिलता रहता है-या यह कि फुलां सेवा मे हम बराबर लगे रहते हैं और जहां-तक मुमकिन होता है ख़ूबसूरती से उस सेवा को सरंजाम देते हैं-या यह कि सेवा और सतसंग दोनों हमको प्राप्त हैं इसलिये हमको अभ्यास करने की इतनी क्या ज़रूरत है।

इस क़िस्म के ख़्यालात उठाकर अभ्यास छोड़ बैठना

बड़ी नादानी की बात है। याद रखना चाहिये कि महज़ सतसंग में आबैठने से सतसंग का फल प्राप्त नहीं हो सक्ता। फल की प्राप्ती के लिये सतसंग की कार्रवाई करनी लाज़िमी है। सतसंग की कार्रवाई और अभ्यास में ज़्याद: फ़र्क़ नहीं है। सतसंग में दृष्टी जोड़ कर बैठना और पाठ को जिसमें राधास्वामी दयाल व राधास्वामी नाम की महिमा और स्थानों का ज़िक्र और चढ़ाई की कैफ़ियत का बर्नन है ग़ौर के साथ सुनना और अन्तर में साथ साथ चढ़ाई महसूस करना और जब जब फ़र्मावें सन्त सतगुरू के बचनों को सुनना (जोकि हृदय के स्थान पर उसी महा बिशेष चेतन धार के कारकुन होने का नतीजा है जिसके साथ अभ्यास के वक्त़ अन्तर में मेल किया जाता है) ध्यान सुमिरन और भजन ही की तो कार्रवाई है। फिर जो शख़्स वाक़ई अक्सर सतसंग में यह कार्रवाई करते हैं और वाक़ई सतसंग का रस व आनन्द हासिल करते हैं कैसे मुमकिन हो सक्ता है कि सतसंग से अलहदा होकर अन्तर में इस रस व आनन्द को लेने की ख़्वाहिश न रक्खें और इस ख़्वाहिश के पूरा करने की ग़रज़ से रोज़मर्रा उमंग के साथ घंटा आध घंटा अभ्यास न करें। या जो कैफ़ियत उनको सतसंग के वक्त़ प्राप्त हुई उसका असर दिल पर रह कर अलहदगी के वक्त़ जब तब उनके ध्यान में सन्त सतगुरू की मोहिनी छबि और उनके अन्तर में राधास्वामी नाम न आजावें। अगर ऐसा नहीं होता है तो ज़ाहिर है कि

ऊपरी तौर से वह लोग सतसंग में रहते हुए दरअस्ल सत-संग से ग़ैरहाज़िर रहते हैं और सतसंग करने का शऊर नहीं रखते।

अब सेवा का हाल सुनिये। जो सेवक बनके सेवा करता है और सेवा को ज़रिया अपनी लियाक़त के इश्त-हार का नहीं बनाता है यानी केवल अपने प्रीतम कुल्ल मा-लिक की प्रसन्नता हासिल करने के निमित्त सेवा करता है वह ज़रूर है कि सेवा करते समय डर डर कर बारम्बार अन्तर में चरनों की याद करके मदद मांगे ताकि सेवा प्रीतम की मौज के मुताबिक़ बन आवे और सेवा कर-चुकने के बाद और ज़्याद: डरकर अन्तर में चरनों में चिमटे यह फ़िक्र लेकर कि कहीं मौज के ख़िलाफ़ तो कोई कार्रवाई न बन पड़ी हो और यह मालूम करने पर कि सेवा मंज़ूर हुई और भी ज़्याद: डर के चरनों में लिपट कर पुकारे कि ऐसा न होने दीजिये कि इस सब कार्रवाई का अहंकार चढ़ जावे जिसके कारन आयन्द: नज़रों से गिरकर मरदूद बन जाऊं और यह मालूम करने पर कि सेवा नापसन्द हुई तो निहायत ख़िजिल व शर्मिन्दा हो-कर झुरे और पछतावे और चरनों को अन्तर में मज़बूत पकड़ के फ़र्याद वास्ते क्षमा व आयन्द: संभाल के करे। इस तौर पर जो हरवक्त़ डर के साथ सेवा में लगा रहता है वह ही सच्चा सेवक है। ऐसे सेवक को जैसाकि उपर ज़िक्र हुआ भला कहां मौक़ा हो सक्ता है कि सुमिरन

ध्यान वग़ैरः से ग़ाफ़िल हो जावे। ख़ुलासा यह की जो सच्चे तौर पर सेवा में लगा है वह डर डर कर चरनों कि याद में लगता है और जो सच्चे तौर पर सतसंग में लगा है वह उमंग उमंग कर अन्तर में चरनों की तरफ़ दौड़ता हैं और जो दोनों में लगा है उसका तो कहना ही क्या है। चित्त में पूरा भय और भाव लिये हुए बार बार अन्तर बाहर चरनों में लगता है और निर्विघ्न अभ्यास की कमाई करता है।

५—कुछ लोग यह कहते हैं कि हमारे दिल में मालिक के व सन्त सतगुरू के चरनों के लिये गहिरी प्रीत मौजूद है और उनके समान हमको कोई शख़्स या बस्तू प्यारी नहीं है इसलिये हम अभ्यास की फ़िक्र क्यों करें।

यह कथन ज़ाहिर करता है कि ऐसे लोगों को सिर्फ़ ऊपरी प्रीत है। जब कभी झकोला आवेगा यह प्रीत ग़ायब हो जावेगी। उनसे सवाल करना चाहिये कि दिन रात तुम क्या काम करते हो। ज़ाहिर है कि दुनिया का काम काज करते हैं। वह क्यों? इसलिये कि संसार में बंधन है। फिर जबकि संसार में बंधन के कारन दिन रात संसार का चितवन और काम करना होता है क्या वजह है कि गुरू महाराज की प्रीत नाम व रूप के चितवन व ध्यान के लिये मजबूर न करे। क्या यह मुमकिन है कि कोई शख़्स किसी से ज़्यादः से ज़्यादः प्रीत रखता हो और उसकी

याद तक न करे और कम प्यारे सामान व संजोग में दिन रात खुशी के साथ ब्योहार करता रहे। माता जो बच्चे से प्यार करती है सदा बच्च को अपनी निगाह के सामने रखती है। बच्चे की प्यारी शकल और उसकी तोतली बातें क़ुदरती तौर पर बार बार उसके ध्यान में आती हैं और माता अपना खाना पीना तक मुहब्बत में आकर बिसार देती है। बच्चा भी जो माता से प्यार करता है एक दम को माता से अलग होना गवारा नहीं करता। थोड़ी थोड़ी देर पर माता को पुकारता है और दिन रात माता की गोद में रहना चाहता है। फिर कैसे माना जावे कि ऐसे लोगों को गहिरी प्रीत कुल्ल मालिक व सन्त सतगुरू से है जबकि वे उस जुक्ती की क़दर नहीं करते जिसकी कमाई से उनको मौक़ा अपने प्रीतम से अलग में बार बार मेल मुलाक़ात करने का मिल सक्ता है और जो जुक्ती ख़ुद प्रीतम ही ने प्रगट फ़र्माई और जिसकी कमाई करने के लिये ख़ास ताकीद उन्हों ने की। अलावा इस के अगर किसी को थोड़ी भी सच्ची प्रीत हुज़ूर राधास्वामी दयाल के चरनों में है वह ज़रूर कोशिश इस बात की करेगा कि उसकी प्रीत बढ़ती जावे और होते होते संसार की और सब प्रीतों पर फ़ायक़ होजावे। चूंकि सिवाय अभ्यास व सेवा व सत-संग के और कोई जुक्ती ऐसी नहीं है कि जिससे यह मुराद पूरी हो और जैसा कि दफ़ा ४ में बयान किया गया सच्चे तौर पर सेवा व सतसंग करने में अभ्यास का सिलसिला

बराबर क़ायम रहना लाज़िमी है इसलिये हर हालत में यानी हज़ूरी चरनों में चाहे प्रीत बढ़के हो या थोड़ी परमार्थी के लिये गुंजाइश नहीं है कि अभ्यास को छोड़ बैठे।

६—बाज़ लोग यह ज़ाहिर करते हैं कि सुना गया है कि सब की तरफ़ से अभ्यास तो गुरुमुख करता है या कहते हैं कि हम जीवों के लिये तो हज़ूरी बानी में फ़र्मान है कि "यह करनी मैं आप कराऊं और पहुंचाऊं धुर दर्बारा" इसलिये हम क्यों अभ्यास करें ?

यह ख़्यालात भी कमी प्रीत की वजह से पैदा होते हैं। समझना चाहिये कि अभ्यास कोई बेगार या मज़दूरी का काम नहीं है। अभ्यास की जुक्ती अपने सच्चे मात पिता कुल्ल मालिक हज़ूर राधास्वामी दयाल से मिलने ही की तो तरकीब है यानी (जुक्ती में यही तो बतलाया गया कि सुरत की बैठक के स्थान पर तवज्जह को जमा कर कुल्ल मालिक के सच्चे और असली नाम को सुरत की ज़बान से पुकारो और उसी स्थान पर अपने प्रीतम के सरूप का अनुमान करो और जब भाग से सरूप प्रगट हो दर्शन करो या अगर घट में शब्द जारी हो तो शब्द की धार को पकड़ के अन्तर में चढ़ो। ज़ाहिर है कि सरूप व शब्द का प्रगट करना जीव के हाथ में नहीं है बल्कि सरासर हज़ूरी दया व मेहर पर मुनहसिर है इसलिये परमार्थी का काम अभ्यास की कमाई में सिर्फ़ इस क़दर रह जाता

है कि ख़ास स्थान या द्वारे पर बैठ कर यह कुल्ल मालिक को बतरीक़े मुनासिब पुकारे और जब वह दया करके अपने रूप या शब्द की धार को उसके घट में प्रगट फ़र्मावें उस में लिपट कर ऊंचे चढ़े और अगर धार फ़ौरन प्रगट न हो तो मिस्ल सच्चे आशिक़ यानी प्रेमी के जबतक मुमकिन हो उमंग के साथ इन्तिज़ार करे। जैसे किसी स्त्री का पती या पुत्र अर्से से परदेश गया हो और उस के आने की ख़बर हो-जिस तौर पर स्त्री पती या पुत्र की आमद के दिन घर की अटारी पर चढ़ के छोटी खिड़की में से गहिरी उमंग लिये हुए पूरी तवज्जह के साथ अपने रिश्तेदार की राह ताकती है इसी तौर पर सच्चा परमार्थी भी अपने प्रीतम हज़ूर राधास्वामी दयाल की आमद की इन्तिज़ार में सुबह शाम ख़ासकर और दिन में भी जब जब मौक़ा मिले अटारी पर चढ़कर खिड़की में से राह ताकता है। ऐसी सूरत में बिरही परमार्थी के लिये अभ्यास को बेगार या मज़दूरी तसव्वर करना और उससे जी चुराना कैसे मुमकिन हो सक्ता है। जो कोई हज़ूर राधास्वामी दयाल के सरूप व चरन धार से अन्तर में मेल करने की कार्रवाई करने से कतराता है उसको किस क़दर प्रेम उन के सरूप व चरन धार से है वह ज़ाहिर है।

जिस शब्द की कड़ी ऊपर लिखी गई अगर उस कुल शब्द को बग़ौर पढ़ा जावे तो मालूम होगा कि इस शब्द के यह मानी हर्गिज़ नहीं हैं कि अभ्यास छोड़ दिया जावे

बल्कि निज रूप के दर्शन की प्राप्ती के निसबत चिंता व घबराहट छोड़ने के लिये हिदायत है। फ़र्माया कि ऐ प्यारे- तुम जो निज रूप के दर्शन हासिल करने के लिये जल्दी करते हो- सुनो- तुमको समझाता हूं। वह निज रूप हमारा इस रूप से अलहदा है और जब तलक मैं खुद सहारा न दूंगा कोई उस रूप को नहीं लख सक्ता है। तुम करनी यानी अभ्यास सेवा व सतसंग वगैरः करो और इन्द्रियों को रोको और मन को मार डालो फिर सुरत को चढ़ा कर गगन में प्रवेश करो और रास्ते के मुक़ामात तै करके राधास्वामी धाम में पहुंचो और निज रूप के दर्शन हासिल करो। तुम सब्र के साथ सतसंग करो दया मेहर से मैं तुमको रफ़्ता रफ़्ता सुधार लूंगा- तुम जल्दी मचाकर क्यों पुकार करते हो। इत्मीनान रक्खो वह रूप तुमको ज़रूर ज़रूर दिखलाकर छोड़ूंगा। तुम्हारी फ़िक्र मैंने अपने मन में धारन करली है तुम बेफ़िक्र रहकर मुझ से प्यार प्रीत करो। संशय सब दूर हटाओ और मेरे संग गहिरी प्रीत करो और होशयारी के साथ प्रतीत करो। यह सब करनी में आप कराऊंगा यानी इसके लिये खुद मुनासिब संजोग पैदा करूंगा (मगर कार्रवाई करनी तुमको होगी) और तुमको धुर घर में पहुंचाऊंगा। कहां इस वचन का मतलब है कि हम लोग करनी से बेपर्वाह हो जावें? आशय सिर्फ़ यह है कि निज रूप के दर्शन जल्द प्राप्त न होने की वजह से शौक़ीन अभ्यासी को ज़्यादः घबराना नहीं चाहिये बल्कि

प्रीत चरनों में बढ़ाते हुए बराबर करनी करते रहना चाहिये। करनी कराने के लिये इन्तिज़ाम के निसबत ज़ाहिर है कि हजूर राधास्वामी दयाल ने अपनी निज धार का यहां पर क़याम कराके हमेशा के लिये बन्दोबस्त फ़र्मा दिया यानी हम जीवों के लिये संजोग सेवा, सतसंग व अभ्यास की जुक्ती की कमाई का करदिया और इन्तिज़ाम इस बात का करदिया कि हमलोग वचन बानी से इस महा दुर्लभ संजोग की महिमा समझकर करनी के घाट पर आवें। अब इतना हमारा फ़र्ज़ है कि करनी करके अपना भाग बढ़ावें। यह भी फ़र्माया है :-

"नहिं संदेह मिले यह पदवी सब सर्नागत जन को।
प्रेमी प्यारे दास भक्त सब जो जो सोधें मनको॥
पर है करम भूम यह मंडल करनी करे सो पावे।
बिन करनी नहिं प्रगट होय फल निज घर कोई न जावे॥"

ऊपर लिखे हुए अर्थों पर बिचार करने से यह भी मालूम होगा कि हजूर राधास्वामी दयाल ने निहायत ज़ोर उनके देहरूप यानी सन्त सतगुरू सरूप से गहिरी प्रीत क़ायम करने के लिये दिया है। प्रीत से हर्गिज़ मतलब ऊपरी या ज़बानी प्रीत से नहीं है बल्कि फ़र्माया है :-

"खाते पीते चलते फिरते।
सोवत जागत बिसर न जात॥

खटकत रहे भाल ज्यों हियरे।
दर्दी के ज्यों दर्द समात॥
जब लग गुरु प्यारे नहिं ऐसे।
तब लग हिरसी जानो जात॥
मनमुख फिरे किसी का नाहीं।
कहो क्योंकर परमारथ पात॥

ऐसी सूरते हाल में कहां मौक़ा है अभ्यास से जी चुराने का।

एक और बात ग़ौर करने के क़ाबिल है यानी यह कि इस शब्द में साफ़ हुक्म है कि "यह करनी मैं आप कराऊं"- जब खुद मालिक करनी कराने के लिये इन्तिज़ाम फ़र्मावेंगे तो ज़ाहिर है कि आज नहीं तो कल मगर ज़रूर बिलज़रूर हमको करनी करनी होगी। जो काम करना ज़रूरी है और जिसके किये बग़ैर हमारा छुटकारा मुमकिन नहीं तो क्यों न हमलोग उसको अबही से करते रहें और मौजूदा समय वृथा जाने न दें।

गुरुमुख के ज़िम्मे जो अभ्यास छोड़ा जाता है यह ग़लत है। ज़रूर किसी बचन के मनमाने मानी लगाए गए हैं। इस क़दर तो कहना दुरुस्त हो सक्ता है कि ठीक ठीक अभ्यास यानी पूरी दुरुस्ती और सफ़ाई और गहिरी लगन के साथ गुरुमुख ही करता है और वह ही प्रगट फल हासिल करता है मगर इसके यह मानी नहीं हैं कि सिवाय गुरुमुख के और किसी को अभ्यास करने की ज़रूरत ही

नहीं है। मन का सोधना हर एक के लिये ज़रूरी है इस-लिये हस्ब हैसियत हर एक परमार्थी को बराबर अभ्यास करते रहना होगा जैसा कि फ़र्माया है :-

काटते और खोदते रस्ता रहो।
मरते दम तक एकदम ग़ाफ़िल न हो॥
भजन कर मगन रहो मन में।
जो जो चोर भजन के प्रानी सो सो दुख सहें॥

७-अक्सर लोग संसारी ज़रूरतों या तकलीफ़ों की वजह से या संसारी कामों में एतदाल से ज़्यादः तव-ज्जह देने से अव्वल अभ्यास में रूखे फीके होने लगते हैं और बाद में यह शिकायत करते हुए कि रस व आ-नन्द तो मिलता ही नहीं है अभ्यास कैसे करें अभ्यास छोड़ बैठते हैं।

इन लोगों को देखना चाहिये आया अभ्यास छोड़ देने से अन्तर में कुछ ज़्यादः रस व आनन्द मि-लने लगा है या कि ख़ुश्की व रूखापन और भी ज़्यादः बढ़ गए हैं। देखने में आता है कि ऐसा करने से मन इस क़दर डांवाडोल होजाता है कि न तो किसी संसारी काम काज में लगता है और न ही किसी परमार्थी का-र्रवाई में जुड़ता है। ऐसे मौक़े पर अगर तबियत पर किसी क़दर ज़ोर देकर मामूल से ज़्यादः अभ्यास किया जावे और मिलने व न मिलने रस का कुछ लिहाज़ न किया जावे तो मुश्किल व मुसीबत का समय सहज़ में

निकल जावे और संसारी काम काज से ग़ैर ज़रूरी तवज्जह सहूलियत के साथ हट आवे और थोड़े ही अर्से में रूखे फीके पन की हालत दूर होके मामूल से बढ़कर दया महसूस हो। ख़्याल करो कि दुनिया का रस व आनन्द तवज्जह की धार के किसी मन या इन्द्री के द्वारा पर एकत्र होने से मिलता है अगर परमार्थी कोशिश करके अपनी तवज्जह की धार को अन्तर में सुरत की बैठक के स्थान पर एकत्र करेगा तो कैसे मुमकिन है कि उसको रस व आनन्द न मिले। रस का न मिलना ही साबित करता है कि जैसा कि चाहिये था तवज्जह एकसू करने की कोशिश नहीं की गई।

अलावा इसके प्रेमी परमार्थी तो रस व आनन्द की क़तई पर्वाह नहीं करता और न ही उसको कोई चाह अन्तर में रोशनी व चमत्कार देखने की है। अभ्यास में बैठने से उसके सिर्फ़ दो मतलब हैं एक तो यह कि मन और तन में से चेतन धार सिमटे ताकि मन व इन्द्रियों का वेग घटे और दूसरे यह कि उस को प्रीतम के दीदार नसीब हो। प्रेमी परमार्थी उमंग के साथ अभ्यास में बैठता है कि शायद आज मुलाक़ात होजावे। निहायत अदब व दीनता से चरनकमलों का ध्यान करके नमस्कार करता है और अभ्यास में मशग़ूल होता है। अगर भाग से मुलाक़ात हो गई तो जब तक मौज हो उसका आनन्द लेता है और बाद

में चरनों में शुकराना के साथ मत्था टेक कर उठ बैठता है और अभ्यास के समय जो कि गहिरा खिचाव होने से तन व मन शिथिल हो गए हैं और फ़ौरन किसी काम में लगना नहीं चाहते इसलिये परमार्थी लेट कर या बैठ कर गुनावन और मनन मुलाक़ात का कर करके रस लेता है और इस हालत में भी सुमिरन ध्यान का सिलसिला जारी रखता है। थोड़े अर्से के बाद जब हाथ पांव खुल जाते हैं उठ कर अपना काम काज करने लगता है और फिर दूसरे वक्त़ इसी तौर पर अभ्यास में लगता है। अगर अभ्यास में मुलाक़ात न हुई तो अपने भरसक इन्तिज़ार के बाद उठ बैठता है और ठंडी सांस भर कर निहायत नम्रता के साथ रोकर प्रार्थना करता है कि हे दयाल! अपराध क्षमा कीजिये और दर्शन दीजिये—दूसरे वक्त़ फिर उम्मेदवार दया मेहर का रह कर अभ्यास में लगता है और जब तक मुलाक़ात न हो बराबर अपने अन्तर झुरता पछताता रहता है और जहांतक मुमकिन होता है रह रह कर रोता है और सच्ची दीनता और ग़रज़मन्दी के साथ प्रार्थना वास्ते दया मेहर के करता रहता है और इनाम में दया पाता है। अगर किसी रोज़ अभ्यास के वक्त़ गुनावानों ने ज़ोर किया तो सुमिरन ज़ोर लगा कर करता है और अगर संसारी सूरतें सामने आ आ कर सताने लगीं या मन के विकारी अङ्गों ने ज़ोर दिखाया तो तबियत पर ज़ोर देकर ध्यान करता है। अगर भजन के समय इधर

उधर के ख़्यालात दुख देने लगे तो उसी आसन में बैठे बैठे थोड़ी देर के लिये सुमिरन व ध्यान करता है और जब चित्त ठहर गया फिर शब्द के श्रवन में मसरूफ़ होता है। अगर गुनावनें और ख़्यालात नाक़िस इस तौर पर भी दूर न हुए तो जैसाकि पोथी जुगत प्रकाश में हिदायत है धुन बांधकर नाम का जाप करता है और अगर इस पर भी मन क़ाबू में नहीं आता है तो चितावनी या विरह व प्रेम के दो एक शब्दों का पाठ करके मन को वस करने की कोशिश करता है। अगर फिर भी मन नहीं मानता है तो दुखी होकर उठ जाता है और अपनी ख़राब हालत पर रोता है और अपने मन पर धिरकार भेजता है और मालिक से मेहर की दात मांगता है और जहांतक मुमकिन होता है संसारी ख़्वाहिशों को चित्त से ख़ारिज करता है और भरोसा रखकर दूसरे वक़्त अभ्यास में बैठता है। इस तौर पर परमार्थी हर हालत में अपनी तबियत को संभालने की कोशिश करता है और अगर यह सब जतन करने पर भी पेश नहीं जाती है तो गुरू महाराज के चरनों में अर्ज़दाश्त भेज कर हुक्म हासिल करके दिलोजान से उसकी तामील करके विघन दूर करता है। यह सब रहनी गहनी शौक़ीन परमार्थी की है। सब सतसंगियों को इसी तरीक़ पर अभ्यास के दुरुस्ती से बनने के लिये कोशिश करनी चाहिये न कि संसारी ख़्वाहिशों से भरे हुए अभ्यास में बैठें और दस पांच मिनट बैठ

कर रस व आनन्द के न मिलने की शिकायत करते हुए अभ्यास से मुंह फेरलें।

तअज्जुब की बात है कि सतसंगी जो कि राधास्वामी मत में मन को जीतने और कुल्ल मालिक से वस्ल करने के इरादे से शरीक हुआ है किसी वक्त मनके विकारी अंगों वग़ैरः की वजह से अपने इरादे में नाकामयाब होजावे और पेट भरकर खाना खाता रहे और उम्दा कपड़ा पहिनता रहे और संसार का काम काज बखूबी करता रहे और अपनी करतूत पर शरमिन्दा न होकर अभ्यास को छोड़ बैठे या संसारी ज़रूरतों को आगें रखकर अपने परम अर्थ को बालाए ताक़ रखदे और उसके प्राप्ती के लिये जो जुक्ती सीखी है उसकी कमाई से क़तई बेपर्वाह होजावे!

८—ऐसा भी देखने में आता है कि अभ्यास में बैठने पर शुरू में परमार्थी के अन्तर नामुनासिब तरंगें उठने लगती हैं और बाज़ वक्त इस क़िस्म के फ़ासिद ख्यालात ज़ोर दिखलाते हैं कि जिनका इसको वहम व गुमान भी न हो और हालांकि यह इनसे सख्त नफ़रत करता है और बचना चाहता है मगर कुछ पेश नहीं जाती इस तरह के तजर्बे हासिल करके परमार्थी अभ्यास छोड़ बैठता है।

ऐसी हालतों से परमार्थी को किसी तरह से घबराना

नहीं चाहिये वल्कि मुनासिब है कि सुमिरन ध्यान किसी क़दर तवियत पर ज़ोर देकर चन्द रोज़ तक करे ऐसा करने से यह विघ्न दूर हो जावेंगे।

असल में यह तरंगें दो वजहों से पैदा होती हैं। या तो इसके अन्दर जो अनेक नक़्श पड़े हैं उनकी सफ़ाई की कारंवाई जारी होने से या पिछले नाक़िस कर्मों के प्रगट होने की वजह से जिनका इज़हार अगर मामूली तरीक़ पर होता तो न मालूम इसका क्या हाल होता और अचरज नहीं कि उनमें वहकर यह कई एक ऐसे ख़राब और नामुनासिव काम कर वैठता जिनकी वजह से इसको गहिरा दंड सहना पड़ता मगर कुल्ल मालिक हज़ूर राधास्वामी दयाल ने इस भक्त पर अति दया करके उन नाक़िस कर्मों को हालत अभ्यास में काटने की मौज धारन करके इसकी रक्षा फ़र्माई और मन का सेर और सूली का कांटा करके करमों का भुगतान किया। अगर ऐसी हालत में सिलसिला सुमिरन ध्यान का वरावर जारी रक्खा जाता तो निहायत आसानी के साथ यह चक्कर दूर होजाता क्योंकि नाम और सरूप के सामने गुनावन व नक़्शों का ज़ोर नहीं चल सक्ता।

अभ्यास में कामयावी हासिल होने के लिये अव्वल तय्यारी ज़रूरी है और वह तय्यारी हृदय की शुद्धता है इसलिये परमार्थी को चाहिये कि हृदय की मलीनता दूर

होने के इन्तिज़ाम और अन्तर के गुप्त मैल के खुरच खुरच कर निकाले जाने की कार्रवाई को दया समझे। बाहर से जैसे मकान साफ़ सुथरा दिखाई देता है मगर झाड़ू लगाने पर गर्द व गुबार बड़े ज़ोर से उड़ने लगता है मगर इस गर्द व गुबार को देखकर मालिक मकान घबरा नहीं जाता है क्योंकि वह जानता है कि असल में मकान की सफ़ाई होरही है इसी तौर पर परमार्थी को भी समझना चाहिये कि घट की सफ़ाई की कार्रवाई शुरू होना और उसकी वजह से घट में गर्द व गुबार का ज़ोर दिखाई देना कोई नुक़सान की बात नहीं है। कुत्ता भी जिस जगह पर बैठता है पहिले दुम चलाकर उस जगह को थोड़ा बहुत साफ़ करलेता है फिर अगर मालिक दया करके अपने चरन पधारने से पहिले परमार्थी के घट को साफ़ करने लगा तो घबराने की कोई बात नहीं है। चाहिये कि सुमिरन ध्यान की मदद से शौक़ के साथ सफ़ाई हासिल की जावे ताकि बिघनों से जल्द छुटकारा मिले।

९–बाज़ लोग असल में तो अपने तन व मन पर ज़ोर देना नहीं चाहते मगर मुंह से यह कह कर सहज में अभ्यास से किनारा कर बैठते हैं कि भाई हमारे लिये तो अभ्यास करने की मौज नहीं मालूम होती।

यह अजब चालाकी मनकी है। मन मालिक की मौज को इल्ज़ाम देकर अभ्यास से जी चुराना और अपनी

मौज में वर्तना चाहता है। ख़्याल करना चाहिये कि मौज के मानी लहर के हैं इसलिये मालिक की मौज कहने से मतलब कुल्ल मालिक की लहर से हुआ और इसवास्ते जब तक किसी के घट में मालिक से उठकर लहर न आवे यानी धुर से प्रेरना न हो वह मौज की निस्बत ज़िक्र करने का अधिकारी नहीं है। ऐसी हालत में तुच्छ जीव तन मन में बंधा हुआ और मन की लहरों में बहता हुआ कैसे इल्म कुल्ल मालिक की मौज का रख सक्ता है। जब कोई काम आसानी व ख़ूबसूरती के साथ बग़ैर किसी ख़ास जतन व परिश्रम के बन जावे तब हम लोग कह सक्ते हैं कि यह काम मौज से हुआ। मस्लन कोई शख़्स जोकि नौकरी की फ़िक्र में है बाज़ार किसी काम से जाता है रास्ता में कोई शख़्स मिलता है और वह उससे नौकरी करने के लिये दर्यांफ़ करता है यह बख़ुशी नौकरी मंज़ूर करता है और कहता है कि देखो मैंने कुछ बहुत जतन भी नहीं किया था मौज से यह नौकरी मुझको मिल-गई। इस तार की अनेक मिसालें और भी दी जासक्ती हैं। मतलब यह है कि हमारी थोड़ी सी कोशिश से किसी काम के सहूलियत व उम्दगी के साथ बन जाने पर हम-लोग यह कहने के मुस्तहिक़ व क़ाबिल हाते हैं कि यह काम मौज से हुआ। इसी तौर पर अगर किसी काम के सरं-जाम देने के लिये हम लोग अपने तरफ़ से पूरी कोशिश व पैरवी करदें मगर काम बन न पड़े तब भी हम लोग

यह कहने के क़ाबिल होते हैं कि हमने तो अपनी तरफ़ से सब कुछ कर डाला मगर उसके बनने की मौज न थी। हासिल कलाम यह कि किसी काम के बिला अपनी तरफ़ से ख़ास कोशिश किये के ग़ैब की मदद से बन जाने या किसी काम के बावजूद अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश करने के ग़ैब की मुख़ालिफ़त से न बन आने की हालतों ही में हम लोग मजाज़ मौज का हवाला देने के होसक्ते हैं क्योंकि सिर्फ़ इन ही हालतों में हवाला देने से पहिले हमको मौज की तरफ़ से दख़ल का तजरुबा हो चुकता है। फिर अभ्यास में लगने के लिये पूरी कोशिश किये बग़ैर ही यह कह देना कि हमारे लिये मौज अभ्यास करने की नहीं है नामुनासिब हुआ। ऐसे परमार्थी से अगर सवाल किया जावे कि तुमको कैसे मालूम हुआ कि तुम्हारे लिये मौज अभ्यास करने की नहीं है और क्यों तुम्हारे लिये मौज अभ्यास करने की नहीं है तो कुछ जवाब नहीं दे सकेगा। अगर किसी के लिये मौज अभ्यास करने की न होती तो उसको उपदेश ही क्यों दिया जाता और अगर हज़ूर राधास्वामी दयाल की मौज अभ्यास कराने की न होती तो वह यह रचना रच कर ख़ुद तशरीफ़ लाकर क्यों उपदेश अभ्यास की जुक्ती का फ़र्माते और क्यों अपनी निजधार को यहां पर मुक़ीम करके क़ुदरती तौर पर औसर यानी मौक़ा अभ्यास की कार्रवाई का जीवों को बख़्शते।

१०–कभी कभी लोग कुछ दिन अभ्यास के समय अपने बदन ख़ासकर हाथों व टांगों में ऐंठन व मरोड़ी या खुजली या सुमिरन ध्यान आंखों वग़ैरह पर ज़ोर देकर करने पर माथे में दर्द महसूस करके या अपने मन में बेचैनी देखकर अभ्यास छोड़ बैठते हैं।

मालूम होवे कि चेतन यानी जान की धार हरवक़्त हम लोगों के मन व तन में बड़े ज़ोर शोर के साथ जारी है और उसका रुख़ सदा बाहर की तरफ़ रहता है। जितने काम काज दुनिया के हैं सब के सब इस बहाव में मदद देने वाले हैं। इस बहाव की वजह से बदन के ज़र्रे ज़र्रे का रुख़ बाहरमुख हो जाता है। मन और उसके अंगों का भी इसी तौर पर बाहर को रुख़ है। अभ्यास की कार्रवाई चूंकि इस धार को अन्तर में समेट कर सुरत की बैठक के स्थान पर एकत्र करने की है इसवास्ते शूरू शूरू में अभ्यास के समय तन व मन में अकुलाहट पैदा होना निशान अभ्यास के दुरुस्ती से बनने का है। इससे किसी तरह घबराना नहीं चाहिये। कुछ दिनों के बाद जब तन व मन किसी क़दर आदी हो जावेंगे यह सब शिकायतें दुर होजावेंगी। याद रहे कि अभ्यास की कार्रवाई जीते जी मरने की कार्रवाई है इसलिये मौत के समय की कैफ़ियत का वक़्तन फ़वक़्तन अभ्यासी पर तारी होना ज़रूरी व लाज़िमी है।

अभ्यास के समय माथे वग़ैरः में दर्द परमार्थी के ग़लत तौर पर कार्रवाई करने से होता है। उसको चाहिये कि सहज सुभाव अभ्यास में लगे और क़तई किसी क़िस्म का ज़ोर सुरत के समेटने के ख़्याल से आंखों वग़ैरः पर न लगावे क्योंकि इससे हर्गिज़ कोई मतलब न निकलेगा। तमाम बदन को ढीला छोड़कर जिस तौर पर कोइ शख़्स अपने अज़ीज़ की शकल का अनुमान करता है या भूली हुई बात को याद करता है इस तौर पर सहज सुभाव सुरत के बैठक के स्थान पर ध्यान सुमिरन की कार्रवाई करना मुनासिब है। सिर्फ़ इसी तौर पर अभ्यास करने से फ़ायदा होगा। अगर माथे या बदन के किसी हिस्से पर ज़ोर दिया जावेगा तो ज़ोर देने की कार्रवाई की वज़ह से तवज्जह जिस जगह पर ज़ोर दिया जाता है वहीं पर रहेगी और इसलिये सुरत की बैठक के स्थान पर एकत्र होने में बजाय मदद मिलने के विघ्न वाक़े होगा।

११–कुछ लोग जोकि शिर्कत के वक्त मत का असूल अच्छी तरह पर न समझने की वजह से अभ्यास की जुक्ती लेते ही यह आशा बांध लेते हैं कि दो एक बरस में सब मैदान फ़तह करलेंगे और इस लालच में आकर कुछ दिन बड़े ज़ोर शोर के साथ अभ्यास करते हैं मगर पीछे बिघ्न सामने आने से और मन की आशा पूरन होती न देख कर घबरा जाते हैं और कुछ अर्से बाद अभ्यास से मुंह मोड़ लेते हैं।

इस तौर पर गलत उम्मेदें बांधना और जल्दबाज़ी करना ठीक नहीं है। ज़रा समझना चाहिये कि किस क़दर ज़बरदस्त बन्धनों में जीव बंधा है और कैसी लाचारी व बेबसी का यह मुक़ाम है। मन और उसके विकारी अंग काम क्रोध लोभ मोह अहंकार जिनकी प्रबल धार बड़े ज़ोर शोर से हरवक़्त इन्द्रियों के घाट पर बरस रही है हरवक़्त चलायमान हैं–तन ने चेतन धार को बड़ी मज़बूती के साथ जकड़बन्द कर रक्खा है–इन्द्रियां हर आन बड़ी तुन्दी के साथ चेतन धार तवज्जह रूप से संसार की तरफ़ बहा रही है-तन व मन दोनों के अनेक सामान यानी स्त्री पुत्र धन दौलत इज़्ज़त हकूमत मान बड़ाई वग़ैरः ने तवज्जह को बांध लिया है - छः चक्र जिनके वसीलेसे देह का कारख़ाना चलता है ख़ासकर नीचे के तीन चक्र बड़े वेग के साथ कारकुन हैं-हृदय के मुक़ाम पर जहां से कि जाग्रत अवस्था की जीव कुल कार्रवाई करता है बड़ी ज़बरदस्त गांठ लगी है - ऐसी ख़राब हालत में बास करते हुए किसी शख़्स का आशा धारन करना कि एकदम पिंड और ब्रह्मांड से होकर निज धाम में पहुंच जाऊंगा दलील अनसमझता की हुई। इसलिये मुनासिब है कि प्रेमी जानों के संग में रह कर या कुछ अर्सा हाज़िरी सतसंग की देकर परमार्थी अव्वल अपनी मज़कूरा वाला दशा से बाख़बर हो और फिर अपने मन के जोश व ख़रोश को तज के गहिरे शौक़ व दीनता के साथ अभ्यास में

मसरूफ़ हो और रफ़्तः रफ़्तः एक के बाद एक दिक़्क़त को हल करता हुआ सुरत को उसकी बैठक के स्थान पर जमाने के लायक़ हो और इस तौर पर सब्र व धीरज के साथ अभ्यास करता हुआ तन मन और उनके सामान से अपनी सुरत को आज़ाद होता हुआ मुलाहिज़ा करके और कुल्ल मालिक के चरनों में अपना प्रेम व प्रीत बढ़ता हुआ देखकर और उनकी दया व मेहर के पर्चे पाकर भागों को सराहे।

१२—बाज़ लोग सन्तसतगुरू वक़्त और उनके संग की महिमा व मुख्यता न समझते हुए अपने किसी रिश्तेदार या दोस्त की हालत देख कर या मत की कोई पुस्तक पढ़ कर उपदेश लेलेते हैं और कुछ दिन अभ्यास करके ढीले पड़ जाते हैं।

वाज़े हो कि राधास्वामी मत की जान सन्तसतगुरू वक़्त हैं-उनकी मौजूदगी के बग़ैर यह मत मिस्ल और दूसरे मतों के मुर्दा है और इस मत की कार्रवाई सिर्फ़ शुभ कर्म का फल देने वाली रह जाती है। ध्यान भजन में उन ही के आसरे सरूप व शब्द से मेल करने की कोशिश की जाती है इसलिये जब तक परमार्थी सन्तसतगुरू वक़्त के चरनों में हाज़िरी देकर उनसे परिचै न करेगा तब तक अभ्यास दुरुस्ती व कामयाबी के साथ नहीं बन पड़ेगा जैसा कि "सारबचन" नज़म में फ़र्माया है:—

"गुरुभक्ती बिन शब्द में पचते,
सो भी मानुष मुरख जान॥"

यह ख़्याल ग़लत है कि महज़ मत की पुस्तकों का मुताला करने से या शब्दों के ज़बानी याद करने या गाने से काम निकल आवेगा या किसी लायक़ प्रेमी सतसंगी की सोहबत व ख़िदमत से अभ्यास दुरुस्ती से बन पड़ेगा। पुस्तकों व दूसरे परमार्थी भाई की मदद से परमार्थी समझौती मिल सक्ती है या किसी क़दर मालिक के चरनों में पहुंचने व अभ्यास की जुक्ती की कमाई करने का शौक़ पैदा होसक्ता है मगर इस शौक़ का पूरा होना और अभ्यास का दुरुस्ती से बनना और मालिक के चरनों में बासा पाना केवल सन्तसतगुरू वक्त की मदद व दया मेहर ही से होसक्ता है। अलावा इस के अनेक संशय और भर्म जिनकी इसको ख़बर भी नहीं और जो वक्तन फ़वक्तन झीनी घात करके इसको डांवाडोल व सुस्त करते रहते हैं परमार्थी के मन में भरे रहते हैं और वह सिर्फ़ सन्तसतगुरू के चरनों में हाज़िरी ही के प्रताप से दूर होसक्ते हैं इसलिये हर शौक़ीन अभ्यासी को मुनासिब है कि अगर सन्तसतगुरू मौजूद हों जहां तक मुमकिन हो बार बार उनके चरनों की हाज़िरी दे और सतसंग के बचन ग़ौर के साथ सुने और सन्तसतगुरू के साथ गहिरी प्रीत करे वर्ना:-

"दिन नहिं पक्ष मास नहीं बरसा,
कभी न दर्शन को मनतरसा।
कहो कैसे तुम्हारा उद्धारा,
नर्क निवास दुःख चौधारा ॥"

१३–बाज़ लोग अभ्यास में तो लगते हैं मगर अभ्यास के लिये जो परहेज़ बतलाये गए हैं मसलन खाना मिक़्दार से किसी क़दर कम खाना - कम बोलना - इधर उधर बेमतलब न फिरना अभ्यास में बैठते वक़्त संसारी ख़्यालात न उठाना व नींद न आने देना वग़ैरः वग़ैरः का लिहाज़ नहीं करते इसलिये असल शब्द सुनने से महरूम रहते हैं और ख़ून की गर्दिश वग़ैरः से जो शब्द हो रहा है उसको सुनकर और उसमें कोई रस न पाकर ग़ैर सतसंगियों की तरह ख़्याल करने लगते हैं कि असल शब्द कुछ नहीं है यही ख़ून की गर्दिश व नाड़ियों के चटकने व वायू के घूमने की आवाज़ है इसके सुनने में क्या फ़ायदा है।

परमार्थी को मुनासिब है कि तन व मन की सफ़ाई व स्थिरता के मुतअल्लिक़ जो परहेज़ बतलाए गए हैं उनका ज़रूर ख़्याल रक्खे। सब कोई जानता है कि बीमार अगर मुनासिब परहेज़ न रक्खे तो कोई दवा फ़ायदा नहीं कर सक्ती है और बीमारी दूर नहीं हो सक्ती है इसलिये अभ्यास के बाअसर तौर पर बनने और तन व मन के विघ्न दूर रखने के लिये परहेज़ों का ख़ास तौर पर लिहाज़ रखना लाज़िमी है।

शब्द के मुतअल्लिक़ जो ख़्याल ज़ाहिर किया गया वह क़तई ग़लत है। ज़रा ग़ौर करना चाहिये कि अगर महज़ ख़ून की गर्दिश वग़ैरः का सुनना अभ्यास होता तो मुफ़स्सिलः ज़ैल ख़ास परख पहिचानें निज शब्द के मुतअल्लिक़ क्यों बतलाई ज़ातीं यानी

(१) ख़ास दिशा ही के शब्द को सुनना चाहिये।

(२) ब्रह्मांड के पहिले स्थान की जो आवाज़ बतलाई गई है सिर्फ़ उसी को छांट कर सुनना चाहिये और मजमुआ का शब्द नहीं सुनना चाहिये।

और यह भी समझना चाहिये कि शब्द की धार के प्रगट होने का जो असर बयान किया गया है यानी यह कि बड़े ज़ोर के साथ खिंचाव महसूस होगा-तन मन दोनों सुन्न हो जावेंगे और हृदय में मरोड़ी पैदा होगी-इस तरफ़ की ख़बर मुतलक़ न रहेगी और अन्तर में गहिरा रस व आनन्द मिलेगा वग़ैरः वग़ैरः- यह सब बातें ख़ून की गर्दिश वग़ैरः की आवाज़ सुनने से कैसे ज़हूर में आसक्ती हैं और अगर आसक्ती हैं तो क्यों तुम्हारे अन्तर में पैदा नहीं हुई? अगर अभ्यास में शब्द सुनने पर किसी के भी तन व मन पर यह असर पैदा न हों तब तो एतराज़ दुरुस्त हो सक्ता है लेकिन अगर सिर्फ़ कोई ख़ास शख़्स इनसे महरूम रहे और आम तौर पर जब तब अभ्यासियों पर यह हालतें आती रहें और अनेक

नये सतसंगी जिनको सिर्फ़ पहिला उपदेश मिला और जिनको क़तई मालूम न था कि क्या हालत अभ्यास के समय होगी अपना हाल बयान करने में इन सब का ज़िक्र करते हैं तो ऐसी हालत में शब्द को खून की गर्दिश वग़ैर-तसव्वुर करना ग़लत होजाता है। इसलिये अगर अभ्यास में बैठ कर शब्द सुनने पर किसी के ऊपर मज़कूरा बाला असर नहीं आते हैं तो समझना चाहिये कि उसको अभी असल शब्द प्राप्त नहीं हुआ है और कसर उस के अमल में है।

१४—बाज़ लोग इम्तहान मुक़द्दमा या किसी और संसारी काम काज में नाकामयाब होकर अभ्यास में रूखे फीके हो जाते हैं।

यह ख़्याल कि चूंकि हम राधास्वामी मत में शामिल हैं इसलिये हमारे ऊपर कोई दुनियावी उल्टी सीधी हालत आनी ही नहीं चाहिये ग़लत है। संसारी काम काज का बनना व बिगड़ना कर्मों के हिसाब किताब पर मुनहसिर है। अगर कोई सच्चा परमार्थी है तो उसको तो हमेशा यह प्रतीत रहनी चाहिये कि कर्ता धर्ता मेरे लिये एक हज़ूर राधास्वामी दयाल हैं जो कुछ हालत मेरे ऊपर आती है वह उन्हीं के हुक्म से आती है और चूंकि उनकी मौज सदा हमारी असली परमार्थी बेहतरी के लिये है क्योंकि यह रचना भी हमारी बेहतरी ही के लिये यानी हमको अचेत से चेत दशा में लाने के

निमित्त की गई है इसलिये ज़रूर कोई न कोई गहिरा परमार्थी फ़ायदा इस ज़ाहिरा नुक़सान की सूरत में मुतसव्वर होगा। यह हरगिंज़ नहीं होसक्ता कि कुल्ल मालिक हज़ूर राधास्वामी दयाल मेरे रक्षक हों और मेरा किसी तरह पर असली व वाक़ई नुक़सान हो जावे:-

"मैं सेवक समरत्थ का कभी न होय अकाज।
पतिव्रता नांगी रहे तो वाहि पती को लाज॥"

मेरे ऊपर किसी भी हालत का आना साफ़ ज़ाहिर करता है कि हज़ूर मेरी जानिब मुख़ातिब हुए इससे बढ़के मेरी क्या बड़भागता हो सक्ती है।

इसके अलावा समझना चाहिये कि क्या किसी और के ऊपर उल्टी सीधी हालतें नहीं आतीं? क्या कोई ग़ैर सतसंगी इम्तहान या मुक़द्दमा में नाकामयाब नहीं होता? या अभ्यास छोड़ देने से गारन्टी इस बात की होगई कि नाकामयाबी न होगी? क्या सब के सब ग़ैर सतसंगी हमेशा दुनिया के काम काज में नफ़ा व नुमा ही पाते हैं? इन सब बातों पर ग़ौर करके परमार्थी को अपने ऊपर धिक्कार भेजना चाहिये कि ज़रा सी ही तन या मन की सहूलियत न मिलने पर या दिली ख़्वाहिश पूरी न होने पर जो अभ्यास से मुंह मोड़ लिया तो तन मन और इनके सामानों से अलहदगी के लिये और इस

संसार से छूट कर कुल्ल मालिक के चरनों में बासा पाने के लिये कहां ख़्वाहिश रह गई !

१५–यह भी होता है कि सतसंगी कुछ दिन अभ्यास करता है मगर थोड़े दिन बाद अन्तर में हस्ब ख़्वाहिश तजरुबे हासिल न होनें से अभ्यासं छोड़ देता है और कहता है कि अन्तर में तो कुछ खुलता ही नहीं है अभ्यास कैसे करें।

ऐसे सतसंगी से पूछना चाहिये क्या अभ्यास छोड़ने पर अन्तर में कुछ खुल गया या कुछ खुलने लग-गया अगर नहीं तो अन्तर में तजरुबे हासिल करने के लिये जो जुक्ति बतलाई गई है उसका अभ्यास ज़्यादः तवज्जह और सरगर्मी के साथ क्यों नहीं करते हो ?

अलावा इसके ज़रा ख़्याल करना चाहिये कि मनुष्य चोले की कार्रवाई कैसे होती है। सुरत अंस जोकि निज शक्ती है यानी चोले की जान है अपनी बैठक के स्थान से तमाम चक्रों व देही में अपनी किरनियां फैला रही है। जिस बेग के साथ सुरत की धार हृदय वग़ैरः नीचे के चंक्रों पर हरदम बरस रही है उसका कुछ हद्द व हिसाब नहीं है। हृदय के घाट से जहां कि मन की बैठक है और जिस के निज ख़वास काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार हैं बार बार धार इन्द्री द्वार पर जाती है। मन

से उठकर जो धार वासना रूप इन्द्री द्वार पर आती है वह खुद मन की मैल में सनी रहती है। इन्द्री द्वारा से भोगों और विषयों का ज्ञान हासिल करके जब वह अपने केन्द्र यानी मन में पहुंची तो वह और भी संसारी मलीनता वहां पर लाकर जमा करती है और इस तरह क़ुदरती तौर पर मन की मलीनता में ज़्यादती और संसारी भोग के पदार्थों में बन्धन होता जाता है। ज़ाहिर है कि यह कार्रवाई क़रीब क़रीब दिन रात जारी रहती है और जन्मानजन्म और हाल के जनम में सालहा साल इसी तौर गुज़र गये हैं।

ऐसी सूरते हाल में सुरत शब्द योग की कमाई का प्रगट फल यानी सुरत की धार का उलट कर ऊपर की जानिब रवां होना थोड़े से अर्से में कैसे मुमकिन हो सक्ता है। उलटना तो दरकिनार धार का बाहर की जानिब बहाव रोकना ही निहायत मुश्किल है। इसलिये निहायत ज़रूरी है कि धीरज के साथ जतन करते हुए परमार्थी अव्वल मन को निर्मल करने की कोशिश करे ताकि धार जो मन के मारफ़त बहे वह मलीनता की गांठ को ज़्यादः मज़बूत न करने पावे।

यह कार्रवाई भी अगर्चे सुरत की धार को उलटने या रोकने से तो सहल है मगर ऐसी आसान नहीं है कि

फ़ौरन बन आवे इसलिये मुनासिब हुआ कि कोशिश में नाकामयाब रहते हुए भी परमार्थी कम अज़ कम सुबह शाम मन व इन्द्री द्वारों को जिनके मार्फ़त धार संसार में फैल कर मलीनता को बढ़ाती है घन्टा आध घन्टा तबियत पर ज़ोर देकर रोकता रहे। ऐसा करना किसी के लिये ज़्यादः मुश्किल नहीं है बशर्तेकि उसको ज़रा सा परमार्थ का शौक़ हो। नतीजा यह निकला कि यह माना कि अभ्यास में बैठने से किसी शख़्श को एक-दम सुरत की धार उलटाने या रोकने में कामयाबी हासिल न हो मगर रफ़्तः रफ़्तः इन्द्रियों और मन को रोकने व मन के शुद्ध होने का फल और आयन्दः के लिये ताक़त तो ज़रूर मिलते जावेंगे और यह कुछ कम बात नहीं है। कुछ अर्सा बाद धार के समेटने व रोकने व उलटने की भी महारत हो सक्ती है और जल्दबाज़ी करके अभ्यास छोड़ बैठने से तो कुछ प्राप्त नहीं हो सक्ता।

परमार्थी को यह भी समझना चाहिये कि अभ्यास का निज मतलब अन्तर में सरूप वा शब्द से मेल करके सिमटने व चढ़ने का है। अगर अभ्यास के वक्त़ अन्तर में सफ़ेद रोशनी या चांद तारे वग़ैरः दिखलाई दे जावें तो बेशक यह निशान दया व अभ्यास दुरुस्ती से बन पड़ने का है मगर शौक़ीन परमार्थी को इन ही चीज़ों के देखने में लग जाना या इसी क़िस्म के तजरुबात के

वार वार या कभी कभी हासिल करने के लिये ख़्वाहिश उठाना मुनासिब नहीं है। उसकी आरज़ू तो सन्तसतगुरू सरूप या शब्द की धार के प्रगट होने और उसमें लगने की होनी चाहिये। तजरुवात मज़कूरा वाला आख़िर माया के घाट के हैं इसलिये इनकी प्राप्ती से कारज नहीं सर सक्ता है।

१६–चन्द लोग कुछ अर्सा अभ्यास करने के बाद सुमिरन ध्यान को छोड़ देते हैं यह ख़्याल करके कि यह तो इब्तदाई अभ्यास है सिर्फ़ नये आदमियों को करना चाहिये। नतीजा यह होता है कि भजन में भी जैसा कि चाहिये उनका चित्त नहीं लगता है और इस वजह से रूखे फीके और अभ्यास में ढीले रहते हैं।

भजन में लगने से पहिले थोड़ा बहुत सुमिरन ध्यान ज़रूर करना चाहिये। ऐसा करने से नाम व सरूप के प्रताप से तन व मन को किसी क़दर निश्चलता व निर्मलता प्राप्त होगी यानी दुनिया का काम काज करने की वजह से जो तन व मन अभ्यास के लिये नामौज़ूं होगये हैं और तवज्जह की धार इधर उधर बिखर गई है मौज़ूं होकर और तवज्जह सिमट कर भजन में दुरुस्ती के साथ लग सकेंगे। मतलब यह कि अन्तर में शब्द सुनने के लिये अव्वल सुरत की बैठक के स्थान पर सिमट आना निहायत ज़रूरी है और यह सुमिरन ध्यान ही की मदद

से हो सक्ता है। सुमिरन ध्यान को हल्की निगाह से देखना ग़लती है। सुमिरन ध्यान में मालिक को अपने घट में बुलाकर दर्शन करना है और भजन में शब्द की धार को पकड़ के ऊपर चढ़ना है। ज़ाहिर है कि हमारे ऊपर चढ़ने के लिये बहुत कुछ अन्तरी सफ़ाई दर्कार है मगर उन समरथ दयाल के लिये हमारी पुकार सुनकर हमारे घट में तशरीफ़ ले आना सहल है इसलिये सुमिरन ध्यान की हर परमार्थी को मुनासिब क़दर करनी चाहिये और जैसाकि हुक्म है अभ्यास में बैठने के समय के अलावा भी चलते फिरते खाते पीते सोते जगते बराबर खटक के साथ नाम व रूप की याद रक्खे ताकि मनको बराबर ठोकर लगती रहे और परमार्थी का सूत कम व बेश हमेशा चरनों से जुड़ा रहे और अभ्यास के वक़्त बैठने पर चित्त शान्त रहे और मन अपना ज़ोर व ग़लबा न दिखाने पावे।

१७–ऐसा भी होता है कि परमार्थी कुछ अर्सा अभ्यास बड़े शौक़ से करता है मगर मालिक की दया मेहर के पर्चे पाकर मन में फूल जाता है और अपनी गती की निस्बत ऊंचे ऊंचे ख़्यालात दिल में उठाकर इनका रस लेने लगता है जिसका नतीजा यह होता है कि अभ्यास के वक़्त बजाय नाम रूप या शब्द के तवज्जह ख़्यालात में बहती रहती है।

परमार्थी को हमेशा अपने मन की थोड़ी बहुत चौकी-दारी रखना चाहिये और दफ़ा ११ में जो ज़िक्र दिक़्क़तों और मुशकिलों का किया गया है उनको याद करके कभी फूलना नहीं चाहिये। हज़ूर राधास्वामी दयाल सतसंगी की प्रतीत दृढ़ करने और उसकी परमार्थी उमंग व उत्साह क़ायम रखने व बढ़ाने के लिये उसको वक़्तन फ़वक़्तन ग़ैरमामूली तजरुबे बख़्शते हैं और ख़ासकर शुरू शुरू में ऐसा अक्सर होता है। इस क़िस्म के पर्चे पाकर परमार्थी को मुनासिब है कि चरनों में शुकराना बजा लाता हुआ गहिरी दीनता व ग़रज़मन्दी के साथ अभ्यास में मसरूफ़ रहकर मुन्तज़िर विशेष दया व मेहर का रहे और जैसाकि फ़र्माया है "साधू तब लग भै करें जबलग पिंजर स्वांस" अपने मन की घातों से डरता रहे।

१८—बाज़ सतसंगी अभ्यास में रस या कोई पर्चा हासिल करके उसको हज़्म करने की कोशिश नहीं करते बल्कि हिदायत के ख़िलाफ़ बेतकल्लुफ़ दूसरे सतसंगियों से उसका ज़िक्र कर देते हैं ऐसा करने से आयन्दः के लिये तरक़्क़ी व रस का मिलना बन्द होजाता है।

अन्तरी पर्चों का हाल सिवाय सन्तसतगुरू के किसी को नहीं बतलाना चाहिये। अक्सर तो लोग सुन कर ईर्षा करने लगते हैं जिसकी वजह से इसको नज़र लग-जाती है या अगर सुनने वालों में दो एक ऐसे शख़्स मौजूद

हों जो इसकी निस्बत आला ख़्यालात रखते हों जा बेजा तारीफ़ करके इसके मन को फुलाकर हस्ब मज़कूर: दफ़ा १७ इसका सख़्त हर्ज व नुक़सान कराते हैं। ख़्याल करना चाहिये कि कुल्ल मालिक सुरत और रचना की जड़ शक्तियां वग़ैर: सब ही तो गुप्त रहती हैं फिर क्या वजह है कि परमार्थी कुल्ल मालिक की जानिब से सुरत के घाट के पर्चे पाकर उनको ज़ब्त न करे। अलावा इसके ग़ौर का मुक़ाम है कि अभ्यास की जुक्ती की कमाई के लिये हुक्म है कि दुनिया के शोर व शर से और घर वालों से अलग हो घर के एक हिस्सा में चुप से बैठ दर्वाज़ा बन्द कर अपने तईं कपड़े से ढक तवज्जह की धार का तन व मन व दुनिया के सामान से न्यारा कर नीचे के पांच चक्रों से हट छिप कर ऊंचे स्थान पर सुमिरन ध्यान भजन किया जावे यानी सिर्फ़ दुनिया-घर वाले-घर वग़ैर: ही से नहीं बल्कि ख़ुद अपने तन मन और नीचे के चक्रों से अलग होकर मालिक के चरनों की याद करना चाहिये इसलिये जो तजरुबा इसक़दर अलहदिगी व पोशीदगी के बाद मिले उसको हज़्म न करना और बेतहाशा दूसरों से बयान कर देना नामुनासिब हुआ और इस नाक़दर-शिनासी व ओछेपन की सज़ा में व नीज़ आयन्द: के लिये होशियार करने के निमित्त अगर परमार्थी की तरक़्क़ी या अभ्यास में रस का मिलना कुछ अर्सा के लिये बन्द कर दिया जावे तो कोई बड़ी बात न हुई।

१९—यह भी देखा गया कि परमार्थी सतसंग या अभ्यास में किसी क़दर आनन्द हासिल करके और अपनी पिछली हालत का मुक़ाबिला करके निहायत मगन होता है और तेज़ शौक़ इस बात का करता है कि सतसंग में आने से पहिले के दोस्त आशनाओं व रिश्तेदारों को किसी तौर पर उनकी ग़लती दूर करके राधास्वामी मत में शरीक करे और इस ग़रज़ से उन लोगों से उलझ कर मत की महिमा व बुज़ुर्गी उनके चित्त में बसाने की कोशिश करता है। समझाता २ थक जाता है और आराम के वक़्त भी लोगों के सवालों के जवाब सोचता रहता है ताकि किसी तौर अपने इरादे में कामियाब हो। इस तरह पर परेशान होकर भला अभ्यास क्या करेगा-नतीजा यह होता है कि अभ्यास छोड़ कर ज़बानी जमा ख़र्च में वक़्त ख़राब करता है।

दोस्त आशनाओं व रिश्तेदारों के सतसंग में शरीक होने की ख़्वाहिश करना तो कोई बुरी बात नहीं है मगर अपने जीव के कल्यान की फ़िक्र छोड़ कर जहान भर का बोझ अपने सिर लेना नादानी की बात है। ग़ौर करना चाहिये कि कुल जीव बच्चे उन्हीं कुल्ल मालिक हज़ूर राधास्वामी दयाल ही के तो हैं जिन्होंने दया करके तुमको सतसंग में खेंचा है और जबकि उन्हों ने औतार कुल जगत के उद्धार करने के निमित्त धारन

फ़र्माया है तो ज़ाहिर है कि कोई जीव बचेगा नहीं। ज्यों-ज्यों जीव लायक़ होते जावेंगे आप से आप चरनों में खिचते चले आवेंगे। फिर क्यों नाहक़ बेवक्त झगड़ा लोगों से ठान कर तुमने अपना हर्ज किया। नीज़ देखना चाहिये कि हज़ूर राधास्वामी दयाल ने आज तक कभी ऐसी मौज नहीं फ़र्माई कि और मज़हबी व दूसरी जमाअतों की तरह आम लोगों से बात चीत मत के बारे में की जावे या मत की पुस्तकों का प्रचार आम लोगों में हो। जिस किसी ने ग़रज़मन्द होकर उनके चरनों में हाज़िरी दी और शौक़ मत का भेद समझने व नीज़ समझ कर कमाई करने का ज़ाहिर किया सिर्फ़ उसी के सामने चर्चा फ़र्माई या उसको किताब देखने के लिये हिदायत की और ज़बानी जमा ख़र्च करनेवालों या महज़ अजूबा के तौर पर मत का हाल दरियाफ़्त करनेवालों को अव्वल तो सतसंग में आने ही नहीं दिया और अगर वह किसी वजह से सतसंग में आ भी गये तो सिवाय मामूली मिज़ाजपुर्सी के मत का भेद उनके रूबरू बयान नहीं फ़र्माया - फिर क्या ज़रूरत है कि परमार्थी जिसको अभी मत के असूलों व भेद से पूरी वाक़फ़ियत भी नहीं है इसके ख़िलाफ़ अमल करे। मुमकिन है कि किसी दक़ीक़ मस्ला का यह ठीक ठीक जवाब न दे सके और उसकी वजह से दरियाफ़्त करनेवाला या दोनों शुबहा में पड़ कर गड़बड़ा जावें। इसलिये मुनासिब है कि अगर

कोई मित्र या रिश्तेदार ग़रज़मन्दी के साथ भेद मत का दरियाफ़्त करे उससे थोड़ी बहुत बात चीत की जावे और अगर कोई शौक़ीन परमार्थ का हो और ज़्यादः हाल समझना चाहे तो उसको सतसंग की हाज़िरी देने के लिये कहा जावे और जहां तक मुमकिन हो तवज्जह एकसू करके अपना वक़्त चरनों की याद ही में सर्फ़ किया जावे।

२०–यहां तक बयान उन विघ्नों का हुआ जिनकी वजह से परमार्थी अभ्यास में बैठना ही छोड़ देता है। अब आगे थोड़ी सी मुफ़ीद हिदायतें इस क़िस्म की लिखी जाती हैं जिनका लिहाज़ रखने से परमार्थी किसी क़दर कामयाबी के साथ अपना अभ्यास कर सक्ता है।

(१) खाने पीने व संग सोहबत के निस्बत पूरा ख़्याल रखना चाहिये यानी अपनी हक़ व हलाल की कमाई में गुज़र करना - चिकने चुपड़े भोजन खाने की आरज़ू न रखना और भूक से किसी क़दर कम ख़ुराक खाना - संसारी बासनाएं जिन लोगों के हृदय में प्रबल रहती हैं या जो लोग ज़बानी बात चीत करने ही को परमार्थ समझते हैं उन से जहां तक मुमकिन हो अलग रहना और जो लोग ख़ुद अभ्यास में लगे हैं और संत-सतगुरु की महिमा जिनके हृदय में बसी है उनसे मेल जोल रखना। ऐसा करने से परमार्थी के तन व मन किसी क़दर निर्मल रहकर अभ्यास में ख़लल न डालने पावेंगे।

(२) खाते पीते चलते फिरते काम काज करते जब जब मौक़ा हो या याद आजावे परमार्थी को ज़रूर दो चार मिनट के लिये सुमिरन ध्यान करना चाहिये। ऐसा करने से मन पर बार बार रोक व चोट लगती रहेगी व नीज़ किसी काम या सामान में ज़रूरत से ज़्यादः तवज्जह न फंसने पावेगी और इस वजह से सुबह शाम अभ्यास सहूलियत से बन पड़ेगा।

(३) जिस वक़्त बदन काम काज करते करते हार गया हो या ज़्यादः ग़ौर व फ़िक्र करने की वजह से दिमाग़ थक रहा हो या बड़े ज़ोर शोर से किसी मुआमले के गुनावन व फ़िक्र सता रहे हों उस वक़्त फ़ौरन अभ्यास में नहीं बैठना चाहिये बल्कि मुनासिब है कि अव्वल थोड़ा बदन व दिमाग़ को आराम दिया जावे और लेटे लेटे किसी बिरह या प्रेम के शब्द की एक आध कड़ी को आहिस्तगी के साथ गाया जावे और तवज्जह कड़ी के मानी पर दी जावे मसलन यह कड़ी पढ़ी जासक्ती है—

"मैं बाली तुम पितु और माता।
तुम्हरी गोद खेलूं दिन राता॥"

ऐसा करने से थोड़ी ही देर में थकावट दूर होकर जी सुमिरन ध्यान करने को चाहेगा। ऐसा होने पर चाहिये कि दो चार मिनट लेटे ही लेटे सुमिरन ध्यान

किया जावे और बाद में तबीयत मुआफ़िक़ होने पर अभ्यास में बाक़ायदः लगा जावे।

(४) अभ्यास शुरू करने से पहिले चाहिये कि दो एक मिनट तवज्जह सुरत के बैठक के स्थान पर क़ायम करने में सर्फ़ किये जावें। अगर किसी वजह से तवज्जह उस स्थान पर न जमे तो बेहतर होगा कि तवज्जह अव्वल दो एक मिनट आंखों ही में क़ायम की जावे यानी किसी चीज़ को (अगर फ़ोटो पास है तो उसी को) देखते हुए महसूस किया जावे कि हम उसको ग़ौर से देख रहे हैं–ऐसा करने से तवज्जह और सब तरफ़ों व गुनावनों से हट कर सहज में आंखों में क़ायम हो जावेगी–जब ऐसा हो जावे तो आसानी के साथ सुरत के बैठक के स्थान पर जमाई जासक्ती है। वाज़े हो कि बाहिरी पदार्थ की मदद से तवज्जह लगाने की सलाह सिर्फ़ बहुत तरफ़ों से हटाकर एक तरफ़ लगाने ही के लिये दी-गई है और इसलिये उसमें कामयाबी होते ही फ़ौरन वृत्ती अन्तरमुख करनी चाहिये–बाहिर की तरफ़ ज़्यादः रखना बेफ़ायदा है।

(५) जिस किसी की तवज्जह कुछ देर के लिये सुमिरन ध्यान में जमे लेकिन जल्द उखड़ उखड़ जावे यानी चित्त की वृत्ती स्थिर न हो या नींद व गुनावनों में लय होजाने का तजरुबा हो तो उसको चाहिये कि फ़ी

पांच चार मिनट के बाद चौंप इस बात की रक्खे कि आया सुमिरन ध्यान ही किया जा रहा है या गुनावनों या नींद में वक़्त ज़ाया हो रहा है। इस क़िस्म की निरख परख अगर्चे असल अभ्यास में विघ्न रूप है मगर और ज़बरदस्त विघ्नों के काटने के लिये अगर इसका इस्तैमाल किया जावे तो कुछ हर्ज नहीं है। कुछ दिनों बाद जब तवज्जह ज़्यादः देर तक जमती मालूम पड़े तो निरख परख का वक़्फ़ा बढ़ा दिया जावे और बाद में पूरी कामयाबी होती देखकर इस जतन को छोड़ दिया जावे।

(६) जब सुमिरन ध्यान करके सुरत की धार का सिमटाव काफ़ी तौर पर छटे चक्र पर होजावे तब भजन में लगना चाहिये। मालूम होवे कि शब्द की धार से मेल करने के लिये अव्वल बहुत कुछ अन्तरी सफ़ाई व सुरत का सिमटाव होलेना ज़रूरी है इसलिये आध घन्टा के क़रीब सुमिरन ध्यान ज़रूर करना चाहिये। अगर किसी वक़्त तबीयत पहिले ही से मौज़ूं हो या थोड़े से सुमिरन ध्यान के बाद ही मौज़ूं हो जावे ऐसी हालतों में अलबत्ता बिला सुमिरन ध्यान किये के या थोड़ी देर तक करने के बाद भजन में लग जाना चाहिये।

(७) अगर भजन के समय शब्द प्रगट न हो तो घबराना नहीं चाहिये बल्कि सब्र के साथ इन्तिज़ार करना चाहिये। अगर भजन में गुनावन सताने लगें या ग़लत

तरफ़ का शब्द प्रगट होजावे तो मुनासिब होगा कि पांच चार मिनट तक उसी आसन में बैठे सुमिरन ध्यान किया जावे और जब यह विघ्न दूर हो जावें शब्द के सुनने में लगा जावे।

(८) अभ्यास के समय अगर दया से अन्तर में तजरुबात मसूलन सफ़ेद रोशनी का चांदनी की तरह से खिले हुए नज़राई पड़ना या चिराग़ की लौ का दिखाई देना वग़ैरः वग़ैरः प्राप्त हों उनके लिये शुकराना अदा करना चाहिये मगर आयन्दः इसी क़िस्म के तजरुबात हासिल करने की तेज़ चाह मन में उठाना नहीं चाहिये वर्ना ख़्वाह मख़्वाह तबीयत में रूखा फीका पन आजावेगा। अभ्यासी की आरज़ू अन्तर में रूप व शब्द से मेल करने की होनी चाहिये दूसरे तजरुबात जब कभी प्राप्त हों तमाशाई के तौर पर देख लेना मुनासिब है।

(९) याद रखना चाहिये कि अभ्यास में कामयाबी हासिल करलेना कोई आसान काम नहीं है। अव्वल तो तबीयत का मौज़ूं होना ज़रूरी है और इसके लिये हमेशा जतन व फ़िक्र करना चाहिये दूसरे मौज़ूं होने पर तबीयत का क़ायम रहना लाज़िमी है और इसके लिये भी जतन करना फ़र्ज़ है। तबीयत जमाने के लिये बेहतर होगा कि कुछ मिनट तक सुमिरन ध्यान चिल्ला कर सुरत की ज़बान से यानी अन्तर ही अन्तर सुरत की बैठक

के स्थान पर किया जावे। ऐसा करने से थोड़े ही अर्से में ज़ोर से पसीना बह निकलेगा और बदन में निश्चलता-स्वांस में हल्का पन और चित्त में स्थिरता आजावेगी।

(१०) भजन के समय भी परमार्थी को चाहिये कि फ़ौरन शब्द के प्रगट होने की फ़िक्र में न पड़े बल्कि अव्वल यह कोशिश होनी चाहिये कि अन्तर में एकदम सन्नाटा यानी हू का सा आलम होजावे मगर चेतन रहते हुए यानी नींद या ग़फ़लत न ब्याप जावें। यह असल में मरने से पहिले की दशा है। इस दशा के प्राप्त होने पर अव्वल तो दया से शब्द से ज़रूर मेल हो जावेगा वर्ना इस आला दर्जे की एकसूई से जो आनन्द व निर्मलता प्राप्त होंगे वह भी अपनी ही कैफ़ियत रखते हैं।

——:०:*:०:——

इत्तिला

हज़ूर साहब जी महाराज की तस्नीफ़ की हुई मुफ़स्सलः ज़ैल किताबें छपकर तैयार हैं और राधास्वामी सेन्ट्रल सतसंग दयाल बाग़ आगरा से बराहरास्त या नीचे लिखे हुए पते पर तहरीर करने से मंगाई जा सकती हैं।

नाम किताब	क़ीमत
प्रेम विलास भाग पहिला	॥)
" " दूसरा	॥)
" " तीसरा	॥)
राधास्वामी मत दर्शन (हिन्दी)	॥=)
" " (उर्दू)	॥=)
जिज्ञासा नं० १ हिन्दी	॥)
जतन प्रकाश	॥)

ब्रिजबासी लाल,

बी. ए., एल एल. बी., वकील

अम्बाला शहर।